अेक बुनियादी सवाल

रजि० नं० बी ४४४८
लाअिसेन्स नं० १५

हरिजनसेवक

दो आना

(संस्थापक : महात्मा गांधी)

भाग १७ सम्पादक : मगनभाअी प्रभुदास देसाअी अंक ३८

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाअी देसाअी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद–९

अहमदाबाद, शनिवार, ता० २१ नवम्बर, १९५३

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

सत्याग्रहकी लड़ाअी

[नीचेके हिस्से श्री निर्मलकुमार बोसकी अंग्रेजी पुस्तक 'सिलेक्शन्स फ्रॉम गांधी' से लिये गये हैं। अिनमें पाठकोंको सत्याग्रहके विषयमें बोधप्रद सामग्री प्राप्त होगी।]

१. चारित्र्यरूपी पूंजीके अभावमें सत्याग्रहकी लड़ाअी असम्भव है।

२. हरअेक शुद्ध आन्दोलनके नेताओंका यह फर्ज है कि वे केवल शुद्ध सैनिकोंको ही अुसमें भरती करें।

३. अगर हम हुल्लड़बाजीके कानूनसे बचना चाहते हैं और देशकी व्यवस्थित प्रगति करना चाहते हैं, तो जो लोग आम जनताके नेतृत्वका दावा करते हैं, अुन्हें आम जनताके अनुयायी बननेसे दृढ़तापूर्वक अिन्कार करना चाहिये। मैं मानता हूं कि केवल अपना मत दृढ़तासे जाहिर करना और आम लोगोंके मतके सामने झुक जाना न सिर्फ नाकाफी है, बल्कि अत्यन्त महत्त्वकी बातोंमें नेताओंको आम लोगोंके मतके खिलाफ भी **काम करना** चाहिये, अगर लोग अुनकी अुचित बातको न मानें।

४. वह नेता बेकार है, जो विभिन्न विचारोंके लोगोंसे घिरा होनेके कारण अपनी अन्तरात्माकी प्रेरणाके खिलाफ काम करता है। अगर अुसके पास अपने ध्येय पर अडिग रहने और अपने मार्गदर्शनके लिअे अन्तरात्माकी आवाज न हो, तो वह बिना लंगरके जहाज जैसा अिधर-अुधर बहता रहेगा।

५. अेक योग्य सेनापति हमेशा अपने समय पर और अपनी पसन्दके क्षेत्रमें ही लड़ाअी छेड़ता है। अिन बातोंमें पहल करनेका सारा काम वह अपने ही हाथोंमें रखता है, अुसे शत्रुके हाथमें कभी नहीं जाने देता।

सत्याग्रह आन्दोलनमें युद्धकी पद्धति और व्यूह-रचनाका चुनाव —अुदाहरणके लिअे आगे बढ़ना या पीछे हटना, सविनय कानून-भंग करना या रचनात्मक कार्यों और शुद्ध निःस्वार्थ मानव-सेवाके जरिये अहिंसक शक्ति संगठित करना — वगैरा बातें परिस्थितिकी जरूरतको देखकर निर्धारित की जाती हैं। सत्याग्रहीको जो भी योजना अुसके लिअे बनाअी गअी हो, अुस पर अुत्तेजित या निराश हुअे बिना शान्त निश्चयसे अमल करना चाहिये।

६. बुद्धिमान सेनापति तब तक प्रतीक्षा नहीं करता, जब तक शत्रु अुसे मारकर भगा न दे। वह अैसे मोर्चेसे, जिस पर वह जानता है कि वह डटा नहीं रह सकता, समय रहते व्यवस्थित रूपमें पीछे हट जाता है।

७. अपना अन्तिम लक्ष्य निर्धारित करनेके बाद, जिससे हम पीछे नहीं हट सकते, हम सारी दुनियाकी नम्रतासे जीत सकते हैं।

८. शुद्ध लड़ाअीमें, लड़नेवाले अपने अुस ध्येयसे परे कभी नहीं जायंगे, जो अुन्होंने लड़ाअी शुरू करनेके समय तय कर लिया है — भले लड़ाअीके दरमियान अुनकी शक्ति बढ़ ही क्यों न जाय; और दूसरी तरफ अपनी शक्तिको बिखरते हुअे देखकर वे अपने ध्येयको छोड़ भी नहीं सकते।

९. सत्ताका अविवेकपूर्ण प्रतिरोध जरूर हमें अराजकता, निरंकुश स्वच्छंदता और अिनसे होनेवाले आत्म-नाशकी ओर ले जायगा।

१०. असहयोग, जब अुसकी सीमायें नहीं समझी जातीं, कर्तव्यके बजाय स्वच्छन्दताका रूप ले लेता है और अिसलिअे अपराध हो जाता है।

११. कुछ विद्यार्थियोंने 'धरना देने' के रूपमें जंगलीपनके पुराने रूपको फिरसे जिला दिया है। मैं अिसे 'जंगलीपन' कहता हूं, क्योंकि यह बल-प्रयोगका भद्दा तरीका है। यह काम कायरताका भी है, क्योंकि जो धरना देता है वह जानता है कि मैं कुचला नहीं जाअूंगा। अिस चीजको हिंसा कहना कठिन है, लेकिन यह निश्चित ही हिंसासे ज्यादा बुरी है। अगर हम अपने दुश्मनसे लड़ते हैं, तो अुसे कमसे कम हमारे प्रहारका जवाब देनेका मौका तो देते हैं। लेकिन जब हम अुसे अपनेको कुचलकर निकल जानेकी चुनौती देते हैं, तो यह **जानते हुअे** कि वह हमें नहीं कुचलेगा, हम अुसे बहुत भद्दी और अपमानजनक स्थितिमें डाल देते हैं। मैं जानता हूं कि जिन अति अुत्साही विद्यार्थियोंने धरना दिया, अुन्होंने अपने अिस कामके जंगलीपन पर कभी विचार नहीं किया। लेकिन जिससे अन्तरात्माकी आवाजके अनुकरणकी और मुसीबतोंका अकेले हाथों सामना करनेकी अपेक्षा रखी जाती है, वह कभी विचारशून्य नहीं बन सकता। असहयोग अगर कभी असफल होता है तो केवल भीतरी कमजोरीके कारण ही असफल होता है। असहयोगमें हार जैसी कोअी चीज है ही नहीं। वह कभी असफल नहीं होता। अुसके तथाकथित प्रतिनिधि अपने ध्येयको अिस बुरी तरह पेश कर सकते हैं कि देखनेवालोंको वह असफल हुआ दीखे। अिसलिअे असहयोगी हर काम पूरी सावधानी रखकर करें। अुसमें न तो अधीरता होनी चाहिये, न जंगलीपन, न धृष्टता और न गैरजरूरी दबाव। अगर हम लोकशाहीकी सच्ची भावना अपनेमें बढ़ाना चाहते हैं, तो असहिष्णु बनना हमें पुसा नहीं सकता। असहिष्णुता अिस बातको प्रकट करती है कि अपने ध्येयमें हमारी श्रद्धा नहीं है।

(अंग्रेजीसे)

मो० क० गांधी

www.vinoba.in

धर्मकार्य सबको करना चाहिये *

ग्राम-धर्म

हमारा देश बहुत बड़ा और पुराना है। बहुत प्राचीन कालसे यहां खेती हो रही है और देहातमें लोग रहते हैं। वैसे हिन्दुस्तानमें शहर भी हैं और छोटे-छोटे गांव भी हैं, पर शहरोंकी संख्या बहुत थोड़ी है और बहुत सारे शहर नये हैं। सारा देश जैसे आज़ गांवोंसे भरा है, वैसे पुराने जमानमें भी जिधर देखो अुधर गांव ही गांव थे। नगर बहुत कम थे। और अपने यहां हमेशा मनुष्य रहा है देहातमें, और सारी प्रतिष्ठा गांवकी ही रही है। वेदोंमें प्रार्थना आती है—"हमारे गांवमें वृद्धि हो, हमारे गांवमें सुख-समृद्धि हो, गांव गांवकी पुष्टि हो।" अिस तरह ग्राम-धर्मकी बात प्राचीन कालसे चली आयी है। प्राचीन कालमें हरेक गांवमें अपना-अपना राज था। पांच वर्णोंके प्रतिनिधियोंकी पंचायत बनती थी। जैसे पांच अंगुलियां होती हैं, वैसे पंचायत होती थी। और जैसे पांच अंगुलियां मिलकर काम करती हैं, वैसे ही वे मिलकर काम करते थे। पांच बोले परमेश्वर, अैसा कहा जाता था।

अुस जमानेमें तालीम पानेके लिअे स्कूल आदि नहीं होते थे। लोग झोंपड़ीमें, मंदिरके अहातेमें या पेड़के नीचे बैठते थे, और बड़ी बात तो यह थी कि बड़े-बड़े विद्वान लोग देहातमें रहते थे।

प्राचीन और अर्वाचीन विद्वान

पहले ग्राम-पंचायतोंके जरिये बहुत अच्छी तालीम दी जाती थी। विद्वान पैसे नहीं मांगते थे। आज तो कोअी अेम० अे० हुआ, तो कहता है कि हमें पैसा चाहिये। ज्ञानका भी पैसा मांगता है। जैसे बनिये गुड़-शक्करका पैसा मांगते हैं, वैसे ये ज्ञानके बनिये बन गये हैं। खूबी यह है कि ये कहते हैं आपने बचपनमें हमारे लिअे अितना खर्च किया, अिसलिअे और खर्च करो। यह नहीं कहते कि बचपनमें हम पर बहुत खर्च किया, अिसलिअे अब जिन पर नहीं हुआ है अुन पर खर्च करो। अिन लोगोंने अपने ज्ञानको बाजारमें रख दिया है। पहले विद्वान त्यागी होते थे। जो जितना ज्यादा विद्वान, वह अुतना ही त्यागी। अिसलिअे देहातमें जो ज्ञानी रहते थे, वे देहातमें भिक्षा मांगकर रहते थे। पहननेके लिअे दो कपड़े और रहनेके लिअे छोटीसी झोंपड़ी, और दिनभर विद्यार्थियोंको पढ़ाते रहते थे। पुराने कालमें विद्या देना धर्म माना गया था और वह भी मुफ्त। अुसके बदले रोटी मिलती थी।

गांवका अिन्तजाम गांवमें ही होता था। गांवके बढ़अी, चमार, बुनकर सारे गांवमें होते थे और अुन्हें पैसा नहीं दिया जाता था। आज तो हर जगह पैसा आ गया है। परमेश्वरकी जगह पैसेने ले ली है। पहले तो अगर बढ़अीका काम हुआ, तो वह अुसे करता था और साल भरमें फसलका अेक हिस्सा अुसे दिया जाता था। बढ़अी अुतनेसे सन्तुष्ट भी रहता था। जिस साल फसल कम आअी अुस साल अुसे कम मिलता और जिस साल फसल ज्यादा आअी अुस साल अुसे ज्यादा मिलता। यानी वह सबके दुःखमें दुःखी होता और सबके सुखमें सुखी होता। यही हाल चमार, बुनकर आदि सबका था। यानी ये सारे लोग किसानके सेवक थे; और फसल पर सबका अधिकार था, जमीन सबकी थी।

पैसा लफंगा है

आज तो हालत यह है, कपास बोयेंगे, कपड़ा खरीदेंगे; गन्ना बोयेंगे, गुड़ खरीदेंगे; तिल बोयेंगे, तेल खरीदेंगे। अुस जमानेमें अैसा नहीं था। देहातमें कोल्हू है, हमारे पास तिल है, हमें तेल चाहिये, तो कोल्हूवालेके पास जाते और कहते कि तेल निकाल दो। पैसे-वैसेकी बात नहीं। जो खली निकलेगी वह कोल्हूवालेकी होगी। अैसा सीधा-सा हिसाब था। पर आज बीचमें पैसा आ गया है और पैसेने हरअेकको बदमाश बना दिया है। क्योंकि पैसा खुद बदमाश है, पैसा खुद लफंगा है। पैसेकी रोज कीमत बदलती रहती है। आज रुपयेके चार सेर चावल, कल नौ सेर चावल, तो परसों दो सेर चावल। अैसे लफंगेको हमने कारबारी बनाया। नतीजा यह हुआ कि सारे गांव नष्ट हो गये, और जमीन लोगोंके हाथसे निकलकर जिनके पास पैसा था अुनके पास चली गयी। पहले यह हालत नहीं थी। गांवसे पैसा बाहर जानेकी बात भी नहीं थी। आज बहुत सारा माल गांववाले शहरसे खरीदते हैं। नतीजा यह हुआ कि गांव गुलाम बन गये। कहते हैं जमीन बड़ोंके हाथमें है, अिसलिअे सबको जमीन देना शक्य नहीं है। हम पूछते हैं, जमीन नहीं दोगे तो क्या दोगे? तो कहते हैं कि लोगोंको धन्धे देंगे। लेकिन लोगोंको मरनेके बाद धन्धे देंगे या वे जिन्दा हैं तब तक देंगे, अितना जरा कह दीजिये।

तीन मुख्य काम

हमें तीन बातें गांव-गांवमें करनी होंगी। अेक तो तालीम बदलनी होगी। दूसरी, गांवमें अुद्योग बढ़ाने होंगे। तीसरी बात, जमीनका समान बंटवारा होना चाहिये। जमीन किसीकी मालकियतकी नहीं, वह हम सबकी माता है। वह 'अधिष्ठान' है, निराधारका आधार है।

अमीरी और गरीबी दोनों रोग

अमीरी और गरीबी भी रोग हैं। गरीबको गरीबीसे मुक्त करना चाहिये और अमीरको अमीरीसे मुक्त करना चाहिये। लोग कहते हैं कि गरीब दुःखी हैं और अमीर सुखी रहते हैं। हम कहते हैं दोनों दुःखी हैं। अेकको पचता नहीं है अिसलिअे रोग होते हैं, और दूसरेको मिलता नहीं अिसलिअे रोग होते हैं। अिस तरह दोनों मिलाकर हिन्दुस्तानकी आयु घट रही है और डॉक्टरका धन्धा अच्छा चल रहा है।

दानकी महिमा

अिसलिअे हम कहते हैं, तुम्हारे पास जो ज्यादा जमीन है अुसका दान दे दो। हिन्दुस्तानके लोग बहुत कृतज्ञ हैं। दोषोंको भूलनेवाले हैं। अगर आप जमीन देंगे, तो वे आपके लिअे मर-मिटनेको तैयार होंगे। छोटोंसे भी कहते हैं कि तुम भी अपना हिस्सा दो।

लोग कहते हैं पांच करोड़ अेकड़ जमीन कैसे मिलेगी। हम कहते हैं कि परमेश्वर काम करेगा। तुम अपना कर्तव्य करो। ६ अेकड़में से अेक अेकड़ दो। तुम्हारा नुकसान नहीं होगा। परमेश्वर दान देनेवालेको भर-भरकर देगा।

जिनके पास १०० अेकड़ हैं, १५० अेकड़ हैं, अुन्हें हम कहते हैं कि छठे हिस्सेसे भी ज्यादा दो। जिनके पास ६ अेकड़से कम हैं, अुन्हें कहते हैं सुदामाके तंदुल, शबरीके बेर दे दो। आपको देना तो है, पर आपसे लिये बगैर नहीं दे सकते। सुदामाको भगवान्‌ने भर-भरकर दिया, पर पहले अुससे भी थोड़ा लिया ही था। भगवान् बनिया है। लिये बगैर नहीं देता। बनिया कम देगा, पर परमेश्वर अितना अुदार है कि वह भर-भरकर देता है। हम अेक बीज बोते हैं, तो वह हमें हजार दाने देता है। बनिया गिन-गिनकर देता है। चार सेर बोते हैं तो चार सेर ही देता है। पर परमेश्वर चार सेर बोते हैं तो आठ मन देता है। अैसा दयालु, कृपालु वह परमेश्वर है। अिसलिअे हम गरीबोंसे भी मांगते हैं। लोग हमसे पूछते हैं कि गरीबोंसे क्यों लेते हैं? हम कहते हैं, पापका ठेका श्रीमानोंको दिया ही है, पुण्यका ठेका भी

* भागलपुर जिलेके मेंड़ियानाथ पड़ाव पर दिये हुअे प्रवचनसे।

www.vinoba.in

क्या अुन्हींको दिया जायगा ? क्या सत्य बोलनेका ठेका श्रीमानोंको ही दिया जायगा ? क्या धर्मकार्य करनेका ठेका भी श्रीमानोंको ही दिया जायेगा ? यह धर्मकार्य है। धर्मकार्य सबको करना चाहिये।

विनोबा

विश्व-शांति और बाजारोंका सवाल

[लेखकके 'स्थानीय, राष्ट्रीय और विश्व-सरकार' नामक निबन्धका अेक हिस्सा 'विश्व-सरकारकी स्थापना समस्याका हल नहीं' शीर्षकसे पहले (हरिजनसेवक, १७–१०–'५३) दिया गया है। यह अुसीका दूसरा हिस्सा है।

३०–९–'५३ —म० प्र०]

विभिन्न राष्ट्र विश्व-शांतिके हितमें अेक-दूसरेके साथ हिल-मिलकर रह सकें, अिसके पहले अुन्हें अपने अुत्पादन और व्यापारके लिअे आवश्यक पूर्ति और बाजारकी चिन्ताओंसे मुक्त होना चाहिये। अिस मुक्तिकी दिशामें पहला आवश्यक कदम यह होगा कि वैयक्तिक और सामाजिक मूल्यों तथा अुद्देश्योंमें मूलगामी परिवर्तन हो और हरअेक देश अपने क्षेत्रमें खेती और अुद्योगोंकी संतुलित अर्थ-रचनाका संघटन करे। अैसा किया जाय तो राष्ट्रोंकी बाजारों और साधन-द्रव्योंकी मांगमें काफी कमी आयगी, और अुसके साथ आजकी वह तनातनीकी स्थिति भी कुछ कम होगी जिसके कारण युद्ध होते हैं।

अिससे सिद्ध है कि सच्ची आन्तरराष्ट्रीयताकी नींव आध्यात्मिक संस्कृति और सामाजिक दायित्वका बोध है और अुनकी विश्व-व्यापी प्रतिष्ठाकी कोशिश होनी चाहिये। अैसी संस्कृति न केवल व्यक्तिके अुत्तम विकासके लिअे चाहिये, बल्कि दुनियाकी शान्तिके लिअे भी चाहिये। अिसलिअे जिन्हें अपने दायित्वका ज्ञान है, अैसे छोटे-छोटे समुदायोंकी सारी संस्थाओंमें — घर, स्कूल, चर्च, क्रीड़ांगण आदिमें तथा और दूसरी जगहोंमें भी, जहां स्त्री-पुरुष अपने निजी या सामाजिक अुद्देश्योंके लिअे अिकट्ठे होते हैं, अुस तरहकी संस्कृतिकी स्थापना होनी चाहिये। अगर अुनकी संस्कृति अधूरी रही, तो आन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धोंमें भी बिगाड़ आयगा; लेकिन अगर वह निर्दोष हो, तो शान्ति और सद्भावसे युक्त विश्व-समाज बनना शुरू हो जायगा।

हरअेक राष्ट्र और हरअेक छोटे-बड़े प्रदेशको कुछ मूल्योंका, और अुसकी भाषा, परम्पराओं तथा रीति-रिवाजोंसे सम्बन्ध रखनेवाली कुछ विशेषताओंका, जिनकी वह रक्षा और विकास करना चाहता है, कम या ज्यादा खयाल अवश्य होता है। जिम्मेदारी जितनी मात्रामें स्थानीय होगी, राष्ट्रोंका जीवन और कार्य भी अुतना ही अधिक रंगपूर्ण, विविध, फलप्रद और आकर्षक बनेगा। जीवनकी हीनता या अुच्चता, अुसका गुण सबसे ज्यादा हमारे दैनिक जीवनकी छोटी-छोटी बातोंमें — मैत्रीपूर्ण व्यवहारमें, प्रेमपूर्ण रीति-रिवाजोंमें और मीठी रसयुक्त बातचीतमें प्रगट होता है। अिनको जीवनसे अलग कर लीजिये और जिन्दगी आध्यात्मिक दृष्टिसे सूनी हो जाती है।

सौ साल पहले मेनचेस्टर स्कूलके अर्थशास्त्रियोंने घोषणा की थी कि दुनियामें दूर-दूरके देशोंसे व्यापार करनेकी पद्धति, जिसका ब्रिटेन और पश्चिमके दूसरे देश अुन दिनों विकास कर रहे थे, विभिन्न देशोंमें आपसी मेल-जोल और मित्रता पैदा करेगी और दुनियाकी शान्ति लायेगी। दुनियाकी आजकी हालत बताती है कि अुसका परिणाम बिलकुल अुलटा आया है। निकट और दूर पूर्वमें आज जो अुग्र प्रकारका राष्ट्रवाद अुठता दिखाअी दे रहा है, वह व्यापारकी अुक्त पद्धतिका ही अेक कुफल है, और अुसे शांत करनेका अुत्तम तरीका यही है कि साम्राज्यवादको त्यागकर सबसे सहयोग करनेवाली अर्थरचना स्वीकार की जाय। अिस नवीन पूर्वी राष्ट्रवादमें गांधीका आध्यात्मिक राष्ट्रवाद ही अेकमात्र परन्तु प्रभावशाली अपवाद है।

मेरी हालकी भारत-यात्रामें जिस चीजने मुझे सबसे ज्यादा आकर्षित किया, वह अुसके शिल्पियोंका बहुविध कौशल, अुनकी दस्तकारीका अैश्वर्य और वहांके जीवनकी आध्यात्मिकता थी। मैं भारतके लिअे अिससे ज्यादा बड़ी आपत्तिकी कल्पना नहीं कर सकता कि वह अपनी ग्रामीण अर्थरचनाको छोड़ दे और अेक-सा माल तथा अेक-से मनुष्योंका निर्माण करनेवाली पश्चिमी अुद्योगवादकी निर्जीव पद्धतिका स्वीकार करे। भारतको अुसके आश्चर्यजनक कौशलके अनुरूप अैसे सादे और छोटे-छोटे यंत्रोंकी आवश्यकता है, जो अुसके अुत्पादनको बढ़ा दें और साथ ही अुसकी सर्जक प्रतिभाकी रक्षा और विकास भी करें।

आज बड़े शक्तिशाली राज्योंके निवासी शांतिके लिअे तो पागल हैं, पर साथ ही वे अपने शस्त्रास्त्र भी बढ़ाते जा रहे हैं और मानो नियतिकी अधीनतामें मूढ़ोंकी तरह युद्धकी ओर ही अग्रसर हो रहे हैं। अपने भौतिक सुख-लोभके दलदलमें वे अिस बुरी तरह फंस गये हैं कि जिस विपत्तिसे वे अितना डरते हैं, अुसे वे टाल नहीं पाते। अुनकी विपुल अुत्पादनकी औद्योगिक प्रणाली जितना मिलता है अुससे ज्यादा कच्चा माल और बाजार मांगती है और अिसके कारण आर्थिक संकट, साम्यवाद और जागतिक युद्धका भय पैदा होता है और जिस परिणामसे वे बचना चाहते हैं, वह और ज्यादा निकट खिंचता आता है। अैसी परिस्थितियोंमें कोअी विश्व-सरकार अपना काम नहीं कर सकती।

दुनियाके राष्ट्रों पर अनेकमुखी भयका भूत सवार है; सिर्फ सत्य ही अुनका अुद्धार कर सकता है। और वह सत्य यह है कि जीवनका अर्थ खाने-पीनेसे कहीं ज्यादा है। शांतिकी भी अपनी कीमत है और वह हमें चुकानी होगी। वह सर्जक और दूसरे आध्यात्मिक मूल्योंका फल है और वह तब प्राप्त होगी, जब स्कूलों, कालेजों और कार्यालयोंमें अिन मूल्योंका शिक्षण और पालन होगा। शांतिकी रचना पहले कुटुम्ब, फिर अड़ोस-पड़ोस और गांव, फिर प्रदेश और राष्ट्र और अिस क्रमके अनुसार विकास करते हुअे अन्तमें विश्व-परिवारमें होगी। हमें आज अिसी रचनाको खड़ा करनेकी कोशिशमें जुटना चाहिये। शांतिमय विश्व-व्यवस्थाका अंतिम अर्थ तो जिन्होंने जीवन जीनेकी कला सीख ली है, अैसे लाखों-करोड़ों स्वल्पाकार समाजोंका हिल-मिलकर सहकार पूर्वक रहना है। अुनकी शांति ही विश्व-शांति है, क्योंकि अुन्होंने अिस सार्वभौम नियमको, अिस महान सत्यको स्वीकार किया है कि जीवनका दान ही जीवनकी प्राप्तिका अुपाय है। हम जिस विश्व-व्यवस्थाकी आकांक्षा करते हैं, वह अिस नियमका प्रत्यक्ष व्यवहार है।

(अंग्रेजीसे)

विल्फ्रेड वेलॉक

भूल-सुधार

'हरिजनसेवक' के ता० २४–१०–'५३ के अंकमें छपे 'भूदान-आन्दोलनमें अुठनेवाले प्रश्न' नामक लेखमें पृष्ठ २७२ पर यह वाक्य आया है: 'तीस लाख रुपयेकी खादी पैदा करनेके लिअे आज (खादी-बोर्डकी ओरसे) ५०० कार्यकर्ता नियुक्त किये गये हैं।' अ० भा० खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड, बम्बअी, के श्री लेले लिखते हैं कि कार्यकर्ताओंकी यह संख्या गलत है। खादी-बोर्डने सिर्फ ५० से ७५ कार्यकर्ता ही नियुक्त किये हैं।

५–११–'५३ म० प्र०

www.vinoba.in

हरिजनसेवक

२१ नवम्बर १९५३

अेक बुनियादी सवाल

बम्बअीके अेक भाअीने पारडी सत्याग्रहकी चर्चा करते हुअे निम्नलिखित सवाल अुठाया है। वे कहते हैं, "जमींदारोंको अपनी जमीन बेजमीन किसानोंको बांटनी चाहिये, विनोबाके अिस अनुरोधको शायद कुछ थोड़े जमींदार और पूंजीपति, जिनमें सामाजिक जिम्मेदारीका भाव और चेतना है, मान लेंगे। लेकिन अधिकांश पर अिन प्रार्थनाओंका प्रभाव आसानीसे नहीं पड़ेगा।" श्रद्धाका यह अभाव और शंकाकी यह मनोवृत्ति अुनमें बहुत स्पष्ट और बुनियादी तौर पर पाअी जाती है, जो अपनी विचारधारामें मार्क्सवादी हैं। अुनमें से कुछ श्री विनोबाके सर्वोदय और भूदान आन्दोलनोंमें अुनके साथ अुसी तरह हो गये हैं, जिस तरह कि वे आजादीकी लड़ाअीके समय सत्य और अहिंसामें गांधीजीके साथ हो गये थे।

यह सवाल गांधीजी और मार्क्सके समाज-दर्शनके बुनियादी भेदसे सम्बन्ध रखता है, जिस पर विचार करना आवश्यक है। जो पूरी तरह मार्क्सवादी हैं, अुन्हें अिसमें कोअी शंका नहीं है, बल्कि पूरा निश्चय है कि निर्धन लोगोंको अेक वर्गकी तरह धनवान वर्गसे संघर्ष करना पड़ेगा। भारतके नव-मार्क्सवादियों या कहिये कि गांधीवादी मार्क्सवादियोंका अिसमें सिर्फ यह कहना है कि अैसा संघर्ष भी अहिंसक हो तो ज्यादा अच्छा होगा। गांधीजीकी पुस्तकसे वे भारतीय मार्क्सवादियोंके लाभार्थ यही अेक पृष्ठ ले लेना चाहते हैं।

लेकिन सवाल यह है कि क्या गांधीजीकी अहिंसक पद्धतिकी कलम मार्क्सवादी विचारधाराके पौधे पर लगायी जा सकती है। मार्क्सका समाज-दर्शन, जो कहता है कि समाजमें दो विरोधी वर्ग होते हैं जो अेक-दूसरेसे लड़ते रहते हैं, और अुसकी वर्ग-संघर्षकी पद्धति जो अुसके अिस दर्शनकी सीधी अुपज है, गांधीजीकी सामाजिक ट्रस्टीशिप और अुस पर आश्रित वर्ग-सहयोगकी विचारधारासे बिलकुल भिन्न है। गांधीजीकी विचारधारामें सम्पत्ति और स्वामित्वकी समूची कल्पना अुनके रूढ़ मार्क्सवादी अर्थसे मूलतः भिन्न है। गांधीजीका यह कहना कोअी निरी आलंकारिक अुक्ति या निरर्थक भावुकता नहीं थी कि सारी सम्पत्ति भगवान्‌की है; भगवान्‌की यानी आधुनिक भाषामें राज्य या जनताकी। किसी समाज-रचनामें व्यक्तिके पास जो भी धन-सम्पत्ति रहने दी जाय, अुसके लिअे वह भगवान्‌के समक्ष ट्रस्टी है। यह सिद्धान्त हमें अहिंसक सामाजिक कार्यकी प्रेरक शक्ति देता है। वैयक्तिक और सामाजिक, दोनों क्षेत्रोंमें, वह 'जैसे थे' की स्थिति पर आघात करता है और अुसे विकासोन्मुख बनाता है। व्यक्तिकी तरह अुसे भगवान्‌के प्रति अुत्तरदायी बनना होता है। आधुनिक भाषामें अिसका अर्थ यह हुआ कि नागरिकके नाते वह धन-सम्पत्ति राज्यके अधीन ट्रस्टीकी हैसियतसे ही रख सकता है। सामाजिक क्षेत्रमें वह समष्टिका अेक हिस्सा बन जाता है, केवल किसी वर्ग या खण्डका हिस्सा नहीं। अिस सिद्धान्तका आधार समाजकी आध्यात्मिक व्याख्या है। अिसीलिअे गांधीजी कहते थे कि सत्याग्रह भगवान्‌में — जो कि अुनके लिअे सत्य और प्रेमका ही दूसरा नाम था — विश्वास रखे बिना सम्भव नहीं है। अिसके विपरीत मार्क्सवादी अंतिम विश्लेषणमें जड़वादी हैं। वर्गोंके हितोंमें स्वाभाविक विरोध होता है, यह अुनका बुनियादी विश्वास है।

अिन दो विचारधाराओंका यह फर्क ध्यानमें रखना जरूरी है, खासकर आज जबकि विनोबाका भूदान-आन्दोलन भी मार्क्सवादी दलोंके कार्यक्रमका अेक अंग बनता जा रहा है। अिन दलोंके कुछ सैद्धान्तिक व्याख्याकार अैसा कहते हैं कि अगर जनताके सामने हमने जो अपील पेश की है, वह व्यर्थ जाती है, तो फिर बेजमीन वर्गोंको संगठित करना और अुनकी शक्तिका अुपयोग करना होगा। अगर वह भी विफल हो जाय, तो फिर हमारे लिअे कोअी रास्ता नहीं बचता। गांधीवादकी दृष्टि जहां सर्व पर है, वहां मार्क्सवादकी दृष्टि वर्ग पर रहती है; यहीं मार्क्सवादका गांधीवादसे भेद है। गांधीवादके अनुसार केवल दो रास्ते हैं, अेक हिंसक और दूसरा अहिंसक; अहिंसक रास्ता मनुष्य तथा समाजकी आध्यात्मिक व्याख्या पर आधार रखता है, जबकि हिंसक रास्ता भौतिक व्याख्या पर।

पत्रलेखकने जो तात्कालिक प्रश्न अुठाया है, अुसका अुत्तर मैं गांधीजीके ही शब्दोंमें दूंगा। आगाखां जेलमें मीराबहनने गांधीजीसे पूछा, "स्वराज्यके बाद जमीनका बंटवारा कैसे किया जायगा?'

बापूने जवाब दिया: "जमीन पर राज्यका अधिकार होगा। मैं मानता हूं स्वराज्यमें शासन अैसे लोगोंके हाथमें होगा, जो अिस आदर्शमें श्रद्धा रखते हैं। अधिकतर जमींदार स्वेच्छासे अपनी जमीनें छोड़ देंगे। जो अैसा नहीं करेंगे, अुन्हें कानूनके मातहत अैसा करना पड़ेगा।" (हरिजनसेवक, १०–१०–'५३)

हमें समझना चाहिये कि लोकतंत्रके हाथमें कानून बनानेका अधिकार भी अपने अुद्देश्योंकी सिद्धिके लिअे अेक सबल साधन है। हमें अभी यह सीखना है कि अिस अधिकारका अच्छी तरह और सफलतापूर्वक अुपयोग कैसे किया जाय। लेकिन अगर हम अहिंसाके रास्ते पर चलना चाहते हैं, तो अिसका यह अर्थ नहीं हो सकता कि हम अिन लोकतंत्रके लिअे अुपयोगी साधनोंकी अुपेक्षा करें। अिन साधनोंके सफल प्रयोगका अंतिम बल सत्याग्रह है। मुद्दा यह है कि यह सत्य सारे जन-समुदायका सत्य होना चाहिये, अुसके किसी अेक वर्ग या खंडका नहीं, भले वह कितना ही बड़ा या महत्त्वपूर्ण हो। हमारा अुद्देश्य 'सर्वोदय' सिद्ध करनेका है; वर्गोदय — मार्क्सवादी जो कुछ कहते हैं और करना चाहते हैं, अुसे यह नया शब्द ठीक व्यक्त करता है — सिद्ध करनेका नहीं। हमारे प्राचीन दर्शनकी भाषामें सत्याग्रह सम्पूर्ण जनसमुदायके अद्वैतका, अभेदका प्रतिपादन करता है, जब कि मार्क्सवाद द्वैतका, निर्धन और धनवानों या मालिक और गुलामों आदिके भेदोंका। दोनोंमें बुनियादी भेद है, अुतना ही बुनियादी जितना अध्यात्मवाद और जड़वाद, लोकतंत्र और अधिनायकतंत्र तथा अहिंसा और हिंसामें है।

१३–११–'५३ **मगनभाअी देसाअी**

(अंग्रेजीसे)

साम्ययोगका तत्त्वज्ञान

गीताके छठे अध्यायके २९ से ३२ तकके श्लोक-चतुष्टयमें 'साम्ययोगी समाज' का तत्त्वज्ञान संक्षेपमें आ चुका है। अुन श्लोकोंमें से मैं निम्न फलित निष्पन्न करता हूं:

१. समाजमें किसी भी सत्ताका शासन न हो; सद्-विचारका अनुशासन हो।

२. व्यक्तिकी सब शक्तियां समाजको समर्पित हों। समाजकी ओरसे व्यक्तिके विकासको अवसर प्राप्त हो।

३. अीमानदारीसे, शक्तिके अनुरूप की हुअी सब तरहकी सेवाओंका नैतिक, सामाजिक और आर्थिक मूल्य समान माना जाय।

अितनेमें ही मैं संतोष कर लेना चाहता हूं।

(मूल मराठीसे) **विनोबा**

www.vinoba.in

गांधीजी और धर्म-परिवर्तन

अेक अंग्रेज मित्र और 'हरिजन'के शुभचिन्तक मुझे लिखते हैं:

"गांधीजी और 'धर्म-परिवर्तन'के बारेमें आपका दृष्टि-कोण जानकर मुझे थोड़ी हैरानी हुअी है। मैं देखता हूं कि 'गार्जियन'के अभी हालके अेक अंकमें आपने गांधीजीका वह मत अुद्धृत किया है, जिसमें अुन्होंने कहा है कि हमें यह अिच्छा रखनी चाहिये कि अेक हिन्दू ज्यादा अच्छा हिन्दू, अेक मुसलमान ज्यादा अच्छा मुसलमान बने — वगैरा वगैरा। बेशक, अैसा ही होना चाहिये! लेकिन यह निश्चित है कि अुन्होंने अितना ही नहीं कहा है। गांधीजीने हिन्दुओंको जबरन् अिस्लाम कबूल करानेका जिक्र अपने प्रार्थना-प्रवचनोंमें कअी बार करके 'जबरदस्ती किये जानेवाले धर्म-परिवर्तन' और सच्चे 'हार्दिक धर्म-परिवर्तन'का स्पष्ट भेद समझाया है। सच्चे हार्दिक धर्म-परिवर्तनके लिअे हमेशा अुचित स्थान रहना चाहिये। यहां मैं अलमोड़ाके नजदीक रहनेवाले अंग्रेज हिन्दू साधुओंमें से अेक अुदाहरण देना चाहूंगा। अुनमें से अेक साधुने मुझे पिछली गर्मियोंमें कहा कि वह अेंग्लीकन चर्चमें पल-पुसकर बड़ा हुआ, लेकिन अिसका अुसकी दृष्टिमें कोअी अर्थ नहीं है। बादमें अुसे भारतमें 'सच्चा धार्मिक' अनुभव हुआ, क्योंकि श्री चक्रवर्ती नामक अेक हिन्दूने अुसे अीश्वरका मार्ग बताया। बादमें जब वह अिंग्लैंडमें था, अुसे मालूम हुआ कि अेंग्लीकन चर्चके विधि-विधानकी रचना अुसी अनुभवके आधार पर हुअी है। लेकिन अुसने हिन्दू धर्म नहीं छोड़ा, क्योंकि हिन्दू धर्ममें ही अुसे पहले पहल अीश्वरीय जीवनका अनुभव हुआ। अैसी बातें जरूर होती हैं और आगे भी होंगी, यद्यपि वे अिने-गिने लोगों तक ही सीमित रहती हैं। हममें से ज्यादातर लोगोंको अुसी परम्परामें अीश्वरीय प्रकाशकी प्राप्ति होती है, जिसमें हमारा पालन-पोषण हुआ है।"

'गार्जियन'में अेक अीसाअी मित्रने अिसी तरहकी शिकायत की थी, जिसके जवाबमें मुझे वह बात लिखनी पड़ी, जिसका अुल्लेख अिन अंग्रेज मित्रने अूपर किया है। मैंने लिखा था:

"श्री . . . कहते हैं कि गांधीजी धर्म-परिवर्तनके विरुद्ध थे, अैसा कहना गलत है और मैंने अैसा कहकर गांधीजीके साथ अन्याय किया है। मैं नहीं जानता कि वे अिस नतीजे पर कैसे पहुंचे। मैंने खुद गांधीजीका ही मत अुद्धृत किया था, जिसमें वे कहते हैं कि हमें किसीका धर्म बदलनेकी अिच्छा कभी नहीं रखनी चाहिये, बल्कि हमारी हार्दिक प्रार्थना तो यह होनी चाहिये कि अेक हिन्दू ज्यादा अच्छा हिन्दू, अेक मुसलमान ज्यादा अच्छा मुसलमान और अेक अीसाअी ज्यादा अच्छा अीसाअी बने।"

ये अंग्रेज मित्र अेक अंग्रेज अीसाअीका अुदाहरण देते हैं, जो हिन्दू हो गये हैं। लेकिन वे यह कहना नहीं भूलते कि हिन्दू होनेवाले अंग्रेज अीसाअी अपने ही अेंग्लीकन चर्चके जरिये भी आध्यात्मिक जाग्रति प्राप्त कर सकते थे। अिसलिअे आध्यात्मिक दृष्टिसे भी अपनेको अीसाअी कहना अुनके लिअे कहीं ज्यादा अच्छा होगा, भले सच्चे जीवनकी प्राप्ति अुन्हें अेक हिन्दू मुमुक्षुसे ही क्यों न हुअी हो। अीसाअी धर्मको छोड़कर अुसके विचारको संकुचित क्यों बनाया जाय?

कुछ ही दिन पहले अेक दैनिक पत्र (जिसका नाम मुझे याद नहीं है) में धर्म-परिवर्तनके सम्बन्धमें अेक किस्सा मेरे पढ़नेमें आया। अिस सिलसिलेमें अुसका भी महत्त्व है। अुसे मैं नीचे देता हूं:

अेक अमेरिकन यात्रीने अधीरतासे पूछा, "आप दूसरे धर्मवालोंको हिन्दू धर्मकी दीक्षा क्यों नहीं देते? आपका धर्म अितना सुन्दर है, फिर भी आप सच्चे धर्मकी प्राप्तिके लिअे संघर्ष करनेवाली अितनी आत्माओंको अुससे दूर क्यों रखते हैं? अगर आप 'हां' कह दें, तो सबसे पहले मैं हिन्दू बनूंगा।"

अुत्तर मिला: "लेकिन आप अपना धर्म क्यों बदलना चाहते हैं? अीसाअी धर्ममें अैसी क्या कमी है?"

हक्का-बक्का होकर लेकिन हिम्मत रखकर यात्रीने कहा: "मैं नहीं कह सकता कि अुसमें क्या कमी है, लेकिन अुससे मुझे सन्तोष नहीं हुआ।"

अुत्तर मिला: "बेशक, यह दुर्भाग्यकी बात है, लेकिन आप मुझे अीमानदारीसे बताअिये कि क्या आपने अपने जीवनमें अुसे पूरा मौका दिया है? क्या आपने अीसामसीहके धर्मको पूरी तरह समझा है और अुसके अनुसार अपना जीवन बिताया है? क्या आपने सच्चे अीसाअीका जीवन जीकर देखा है और फिर भी अुसमें आपको कोअी कमी मालूम हुअी है?"

"महाशय, अैसा तो मैं शायद नहीं कह सकता।"

"तब हम आपको सलाह देंगे कि आप जाकर पहले सच्चे अीसाअी बनें। प्रभु अीसाके वचनोंको अपने जीवनमें अुतारिये, और बादमें भी आपको अपना जीवन सफल और कृतकृत्य न मालूम हो, तो सोचेंगे कि आपके बारेमें क्या करना चाहिये।"

जिस सन्त पुरुषने शंकाशील अीसाअीको वापिस अीसाकी शरणमें भेजा, वे शृंगेरी-पीठके शंकराचार्य श्री चन्द्रशेखर भारती स्वामी थे।

भ्रममें पड़े हुअे अमेरिकन यात्रीको शान्त करनेके लिअे स्वामीजीने समझाया:

"आप संयोगवश ही अीसाअीके रूपमें पैदा नहीं हुअे। अीश्वरने अैसा ही आपके लिअे निर्धारित किया था, क्योंकि अपने पूर्वजन्मके कर्मोंके द्वारा जो 'संस्कार' आपने प्राप्त किये थे, अुनके कारण आपकी आत्माने अैसा रूप ग्रहण किया है, जो अीसाअी जीवन-पद्धतिमें ही बड़ीसे बड़ी सफलता सिद्ध कर सकता है। अिसलिअे आपका अुद्धार अुसी धर्मसे होगा, अन्य किसी धर्मसे नहीं। आपको अपना धर्म नहीं, बल्कि अपना जीवन बदलनेकी जरूरत है।"

अमेरिकन यात्रीका चेहरा हर्षसे चमक अुठा और अुसने कहा: "तब महाशय, आपका धर्म अेक अीसाअीको ज्यादा अच्छा अीसाअी, अेक मुसलमानको ज्यादा अच्छा मुसलमान और अेक बौद्धको ज्यादा अच्छा बौद्ध बनानेमें निहित है। आज मैंने हिन्दूधर्मका अेक और भव्य पहलू मालूम किया है, और अिस भव्य पहलूका दर्शन करानेके लिअे मैं आपके चरणोंमें प्रणाम करता हूं। सचमुच मैं आपका बहुत आभारी हूं।"

अिस कहानीसे गांधीजीकी स्थिति बहुत ही स्पष्ट हो जाती है। बेशक, अुनका यह विश्वास था कि मनुष्यका आध्यात्मिक पुनर्जन्म या परिवर्तन जरूर होता है। मैं कह सकता हूं कि प्रत्येक मानव आत्माका अैसा पुनर्जन्म या परिवर्तन होना चाहिये, क्योंकि अिस जगतमें यही अुसका आध्यात्मिक भविष्य और कार्य है। लेकिन यह मनुष्य और अुसके भगवान्के बीचकी बात है। यह पूरी तरह आध्यात्मिक प्रवृत्ति है, अिसलिअे अुसे सामाजिक-राजनीतिक स्तर पर खड़े धर्म-परिवर्तनका भद्दा रूप नहीं लेने देना चाहिये। अिसीलिअे गांधीजी लोगोंको अेक धर्मसे दूसरे धर्ममें बदलनेके मिशनरियोंके प्रयत्नोंकी निन्दा करते थे। और अिसीलिअे वे

www.vinoba.in

हमेशा कहते थे कि कोओी दूसरोंको अपने धर्ममें न बदले, बल्कि अुसे हमेशा यह कामना करनी चाहिये कि हरअेक आदमी अपने धर्मका ज्यादा अच्छा अनुयायी बने।

गांधीजीकी यह स्थिति सही क्यों है, अिसका अेक ज्यादा गहरा कारण भी है। वे मानते थे कि सब धर्म समान हैं; कोओी भी धर्म दूसरोंसे अपनेको श्रेष्ठ न माने। मिशनरी प्रवृत्ति बेशक अेक प्रकारकी श्रेष्ठताकी भावनाको पहलेसे मानकर चलती है, अुसका यह भी दावा है कि सत्य पर अुसका अनोखा या अेकमात्र अधिकार है। कमसे कम शब्दोंमें कहा जाय, तो यह अुसकी सबसे बुरी मान्यता है। खास करके आजकी दुनियामें चल रहे जातीय, धार्मिक और राजनीतिक संघर्षोंकी पृष्ठभूमिमें यह मान्यता और बुरी मालूम होती है। मेरे खयालमें गांधीजी हमारे जमानेके अैसे पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने आध्यात्मिकताके विरुद्ध जानेवाली श्रेष्ठताकी अिस मान्यताके खिलाफ अपनी आवाज बुलन्द की थी। यह भावना अुन्होंने हमारे आधुनिक सामाजिक जीवन और अुसकी परस्पर विरोधी समस्याओंके बीच जीवनभर जो आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त किये अुनसे पैदा हुओी या अुन्हें मिली। सब धर्मोंकी समानताका यह महान् सत्य धर्मनिरपेक्ष या आधुनिक राज्यका सच्चा आधार है, फिर वह राज्य हिन्दू, मुस्लिम, अीसाओी हो या बौद्ध हो। वह धर्मसे अिन्कार नहीं करता, न किसी धर्मके प्रचारसे अिन्कार करता है। लेकिन वह अैसा जरूर कहता है कि सामाजिक मिशनरी प्रवृत्तिके रूपमें धर्म-परिवर्तनको अेक संस्थाका रूप नहीं दिया जा सकता। गांधीजीके शब्दोंमें:

"धर्मप्रचारका अेक सही रूप भी हो सकता है। जब आपको महसूस हो कि बाअिबलकी आपकी विशेष व्याख्यासे आपको शांति प्राप्त हुओी है, तब आप दूसरोंको अुसमें भागीदार बनाते हैं। लेकिन अपने अिस अनुभवको शब्दोंमें व्यक्त करनेकी आपको जरूरत नहीं होती। आपका सम्पूर्ण जीवन आपके मुंहके बनिस्बत ज्यादा बोलता है। भाषा हमेशा विचारोंको पूर्णतया व्यक्त करनेमें रुकावट डालती है। अुदाहरणके लिअे, किसी आदमीसे आप अुसी तरह बाअिबल पढ़नेके लिअे कैसे कहेंगे जिस तरह आपने अुसे पढ़ा है? जो प्रकाश दिन-प्रतिदिन और क्षण-प्रतिक्षण आपको मिलता है, अुसे आप किसीमें बोलकर कैसे पैदा करेंगे? अिसलिअे सारे धर्म कहते हैं: 'तुम्हारा जीवन ही तुम्हारी वाणी है।' अगर आप काफी नम्र होंगे तो कहेंगे कि आप बोलकर या लिखकर अपने धर्मको ठीकसे पेश नहीं कर सकते। . . . भाषा सत्यको सीमित बनाती है, जो जीवनके द्वारा ही सही रूपमें पेश किया जा सकता है।

"जीवन स्वयं अपनेको व्यक्त करता है। बरसों पहले मैंने गुलाबके फूलकी जो अुपमा दी थी, अुसीको मैं यहां फिर दोहराता हूं। गुलाबका फूल चारों तरफ अपनी जो सुगन्ध फलाता है, अुस पर या हर आंखवालेको दिखाओी देनेवाली अपनी सुन्दरता पर कोओी पुस्तक लिखने या प्रवचन करनेकी अुसे जरूरत नहीं होती। बेशक, आध्यात्मिक जीवन सुन्दर और सुगन्धित गुलाबसे कहीं ज्यादा श्रेष्ठ है; और मैं यह कहनेका साहस करता हूं कि ज्यों ही जीवनमें आध्यात्मिक अभिव्यक्ति होगी, त्यों ही आसपासके वातावरण पर अुसका प्रभाव पड़ेगा।

"जब कोओी मनुष्य सत्यको जीवनमें अुतार लेता है, तब अुसे बोलनेकी अिच्छा नहीं होती। सत्यकी अभिव्यक्तिके लिअे कमसे कम शब्दोंकी आवश्यकता होती है। अिस तरह जीवनसे बढ़कर सच्चा और कोओी धर्मप्रचार नहीं है।

"मैं केवल हिन्दुस्तानके ही नहीं, बल्कि सारी दुनियाके विभिन्न धर्मोंके समस्त अनुयायियोंको अेक-दूसरेके सम्पर्कसे ज्यादा अच्छे आदमी बने देखना चाहता हूं; और अगर अैसा होगा तो दुनिया आजसे कहीं ज्यादा रहने लायक बन जायगी। मैं व्यापकसे व्यापक सहिष्णुताकी हिमायत करता हूं और अुसी ध्येयके लिअे काम करता हूं। मैं लोगोंसे कहता हूं कि वे अुसी दृष्टिसे हर धर्मकी परीक्षा करें, जिस दृष्टिसे अुसके अनुयायी अुसे देखते हैं। मैं अपनी कल्पनाके हिन्दुस्तानसे अेक धर्म — यानी पूरी तरह हिन्दू, या पूरी तरह अीसाओी या पूरी तरह मुस्लिम — के विकासकी आशा नहीं रखता; बल्कि मैं चाहता हूं कि वह अपने अेक-दूसरेके साथ मिलकर काम करनेवाले सारे धर्मोंके लिअे पूरी सहिष्णुता रखे।

"सहिष्णुताका अर्थ अपने धर्मकी अुपेक्षा करना नहीं है; अुसका अर्थ है अपने धर्मके लिअे ज्यादा विवेकपूर्ण और ज्यादा शुद्ध प्रेम। सहिष्णुता हमें आध्यात्मिक अन्तर्दृष्टि प्रदान करती है, जो मजहबी पागलपनसे अुतनी ही दूर है जितना कि दक्षिणी ध्रुवसे अुत्तरी ध्रुव। धर्मका सच्चा ज्ञान धर्म धर्मके बीचकी दीवालको तोड़ देता है। दूसरे धर्मोंके लिअे अपने भीतर सहिष्णुता बढ़ानेसे हम अपने धर्मको ज्यादा सही रूपमें समझ सकेंगे।"*

११–११–'५३ मगनभाओी देसाओी

(अंग्रेजीसे)

औजार या बाजार?

अेक मित्र लिखते हैं:

"अेक भाओी (जिन्होंने लम्बे समय तक ग्रामोद्योगोंमें अनुसंधानका कार्य किया है और अुसमें कामयाबियां हासिल की हैं) फैक्टरियोंके विकेन्द्रीकरणमें अुत्साह नहीं रखते। वे कहते हैं, 'यह चीज अच्छी तो है, पर अितनी अच्छी नहीं कि मैं अुसमें पड़ूं।' अुनका खयाल है कि कारीगरोंको आधुनिक औजार दिये जानेसे पिछड़े हुअे कारीगर — जिनकी संख्या बढ़ेगी — और ज्यादा पिछड़ जायंगे तथा कठिनाओीमें पड़ेंगे।' अुदाहरणके लिअे, श्री गुप्ते ने जो नया चरखा बनाया है अुसके सूतसे तैयार हुआ कपड़ा खादी नहीं, मिलके कपड़ेका ही अेक प्रकार है। जब तक आप चरखा नहीं चलाते, खादी नहीं बन सकती। अिस प्रसंगमें वे कपड़ा सीनेकी सिंगर मशीनका अुदाहरण माननेके लिअे तैयार नहीं हैं। नये औजारोंके प्रति अुनकी यह अुपेक्षा और भी आगे जाती है: वर्धाकी सुधरी हुओी घानीकी कीमत ४०० रु० है। अिसी कामके लिअे अुपयोगी अेक नये किस्मके जापानी यंत्रकी — जिसे हाथसे चलाया जाता है — कीमत ३५० रु० है। वह दिल्लीमें बनता है और काममें अिस तरहके बड़े यंत्रकी बराबरी करता है। हमारे ये भाओी अिस संशोधनसे नाराज हैं। वे कहते हैं अुन्हें अुसमें कोओी दिलचस्पी नहीं, और यह भी कि 'अुसके कओी पुर्जे बिगड़ जाते हैं।'

"अुनके अिस निराशाजन्य विरोधके लिअे मैं अुन्हें कोओी दोष नहीं देता। वह ज्यादासे ज्यादा लोगोंका ज्यादासे ज्यादा हित चाहते हैं और अीमानदारीसे विश्वास करते हैं कि कारीगरोंको भौंडे औजार देकर, या कोओी औजार दिये बिना ही वे अुनकी रक्षा कर सकेंगे, अैसी ताकत सरकारने अुन्हें दी है; यानी, गांवोंके हाथ-कारीगरों और यंत्र-अुद्योगों दोनोंके लिअे अलग-अलग क्षेत्र दिये जायंगे। लेकिन अिस तरह सोचें तो फिर संशोधनकी कोओी आवश्यकता नहीं रह जाती। तब तो अुनका यह कहना सही है कि सवाल यंत्रोंके

* 'दि महात्मा अेण्ड दि मिशनरी' नामक अंग्रेजी पुस्तकके पृष्ठ १२९–३०–३१ से अुद्धृत।

www.vinoba.in

सुधारका नहीं, बाजार मुहैया करनेका है — भले अुसकी जो भी कीमत चुकानी पड़े।

"पराजयकी भावनाका यह अेक हद पर पहुंचा हुआ अुदाहरण है। लेकिन अिस तरहका दृष्टिकोण रखनेवाले लोग यह भूल जाते हैं कि अिस अुद्देश्यको हासिल करनेके लिअे अिसकी अपेक्षा काफी सौम्य अुपायोंसे हमारा काम हो सकता है। नये सुधरे हुअे औजारों और प्रारंभिक पूंजीके लिअे सस्ती दर पर कर्जकी व्यवस्था कर दी जाय, तो यह काम हो जायगा।

"मुझे तो सुधारमें अुत्साह है और पराजयसे प्रेरित यह समझौता-वृत्ति अच्छी नहीं लगती। मैं तो हर चीजमें विकेन्द्रीकरण करना चाहूंगा, ग्राम-अुत्पादन-केन्द्र शुरू करूंगा और गांवोंको स्वयंपूर्ण बनाअूंगा। अिसके लिअे गांवोंमें सरकारको जो कुछ करना पड़ेगा अुतना जरूरी है, पर अुससे अधिक नहीं; और अुतना हो जाय तो प्रत्येक ग्रामवासीको सुरक्षा प्राप्त हो जायगी। लेकिन यह करना मुश्किल नहीं है, और मरते हुअेको बार बार 'कोरामिन' देकर जिलाये रखनेसे बहुत आसान है।"

अिस पर अधिक कुछ कहनेकी जरूरत नहीं है। सवाल सीधा है: अगर ग्रामोद्योग अिसी बात पर निर्भर हैं कि सरकार अुन्हें वर्ष-प्रतिवर्ष बड़ी मददकी रकम देती रहे और अुनके लिअे कृत्रिम तौर पर केन्द्रीय ढंगसे नियंत्रित और योजनापूर्वक संघटित बाजार दिया जाय, तो वे कब तक चल सकेंगे? वस्तुस्थिति यह है कि सरकारकी चालू योजनायें अेक ओर तो विकेन्द्रित अुत्पादनको बढ़ावा देती हैं, दूसरी ओर बाजार बहुत ज्यादा केन्द्रित कर दिया गया है।

ग्रामोद्योगोंको चलानेके लिअे अेक प्रारम्भिक परन्तु अस्थायी अुपायकी तरह यह ठीक हो सकता है। लेकिन जब तक अैसी योजना नहीं होती कि गांवका कारीगर न सिर्फ अुत्पादनमें, बल्कि बेचनेमें भी स्वतंत्र हो, तब तक तो अुसकी जीविका कभी भी छिन जानेका खतरा अुसके सिर पर हमेशा रहेगा। अैसी व्यवस्था, जो अुसे आजाद नहीं, गुलाम बनाती है, अिस सवालका स्थायी हल नहीं हो सकती। दूरके बाजारोंके लिअे काम करते रहना भी कारीगरोंको आकर्षक नहीं मालूम हो सकता। और कानूनके जरिये अुन्हें स्थानीय बाजारका अेकाधिपत्य दिया जाय, तो अुसमें आयात-निर्यातके नियंत्रणके लिअे अनेक सीमा-रेखायें बनानी पड़ेंगी, जिससे भ्रष्टाचार और हिंसा पैदा होगी।

और ग्राहकके हितका भी खयाल करना होगा। आखिर अुससे हम कितना खर्च करवाना चाहते हैं? अुसे तो आज जगह-जगह खर्च करना पड़ता है, जिसका अुसे पर्याप्त बदला नहीं मिलता। बिक्री-कर, जकात, नियंत्रित बाजार, सब अुसकी खरीद-शक्ति कम करने और छीननेमें जुटे रहते हैं।

क्या अैसा कोअी रास्ता नहीं है कि गांवके अुत्पादकको भी मदद मिले और ग्राहक भी परेशान न हो? और जिसमें सरकारी पैसा भी अनुत्पादक तौर पर खर्च न हो? अिस सवाल पर जब हम सोचते हैं, तो अिसका अेक ही रास्ता दीखता है कि गांवके कारीगरकी अुत्पादन-क्षमता बढ़ायी जाय। दीर्घदृष्टिसे देखें तो जाहिर है कि ग्रामोद्योगोंके कारीगरको हम ग्राहकों और करदाताओंसे पैसा ले-लेकर मदद देते रहें, अुसकी अपेक्षा यह ज्यादा अच्छा है कि अुसे नये औजार दें और अुनकी जरूरी तालीम दें।

भारतीय किसानमें बुद्धि और कौशलकी कोअी कमी नहीं है। जिस तरह अुसने बाअिसिकल और सीनेकी मशीनसे पूरी तरह समझ-बूझकर काम लेना सीख लिया है, अुसी तरह वह किसी दूसरे आसान औजार या यंत्रको भी समझ सकता है और अुसे चलाना तथा सुधारकर हिफाजतसे रखना सीख सकता है। यंत्रोंको जानने-समझनेकी प्रतिभा अुसमें है, अुसे प्रगट होनेका मौका नहीं मिल रहा है, बस यह बात है।

अेक बार जब मैं दक्षिण भारतमें अेक फैक्टरीका काम जमा रहा था, तो अुसके लिअे आवश्यक तालीम पाये हुअे कारीगर नहीं मिल रहे थे। हमने बहुतसे गांववाले मजदूरोंको रख लिया और वे लोग कुछ ही दिनोंमें सीखकर कुशल कारीगर बन गये। हमारे लोगोंके दिमाग, आंखें और हाथ, सब साथ-साथ और अच्छी तरह काम करते हैं और अिस डरका कोअी आधार नहीं है कि वे ज्यादा जटिल औजार और साधन चलानेमें असमर्थ रहेंगे। बस थोड़ी तालीम, प्रारम्भिक अवस्थामें योग्य मदद और पासमें अुस कामके लिअे अुपयोगी औजारोंकी मरम्मत आदि करनेवाला और योग्य सलाह देनेवाला अेक केन्द्र चलाते रहनेकी जरूरत है।

यह सवाल जरूर पूछा जा सकता है कि हाथ-कारीगरको बढ़िया औजार दिये जायं और सस्ती दरसे यंत्र-चालक शक्ति मुहैया कर दी जाय, तो क्या वह खुले बाजारमें फैक्टरियोंका मुकाबला कर सकता है? अिसका अुत्तर है — हां, वह कर सकता है, अगर वह कच्चा माल अुसी भाव पर खरीद सके, और पक्का माल अुसी भाव पर बेच सके, जिस भाव पर फैक्टरियां खरीदती और बेचती हैं। अिसके लिअे डेनमार्कमें प्रचलित सहकार-पद्धति पर हमें सहकारी मण्डल चलानेकी आवश्यकता हो सकती है। लेकिन अिस सारी योजनामें सरकारका सिर्फ अप्रत्यक्ष हिस्सा होगा। अुसे अपना ध्यान मुख्यतः अिस बात पर देना होगा कि अिन छोटी श्रेणीके अुत्पादकोंको अपने अुद्योगोंके लिअे सस्ती दर पर कर्ज मिलता रहे, और तालीमकी व्यवस्था रहे।

छोटे-छोटे पर अत्यन्त सक्षम औजारोंके महंगे होनेकी कोअी जरूरत नहीं है। कोअी अेक ही चीज बनानेवाली फैक्टरियोंमें अुन्हें विपुल प्रमाणमें बनाया जाय, तो वे बहुत सस्ते बनाये जा सकते हैं।

बेशक, ग्रामोद्योगोंको अिस हद तक विकसित करने और साधन-सम्पन्न बनानेमें समय लगेगा कि वे फैक्टरियोंका मुकाबला समान भूमिका पर करने लगें। तब तक तो यही ठीक है कि सरकार अुन्हें आर्थिक मदद पहुंचाती रहे, और अुन्हें सुरक्षित बाजार दिया जाय। लेकिन वह अंतिम या स्थायी हल नहीं हो सकता; अुसमें अपनेको खुद चलाते रहनेकी शक्ति नहीं है। हमें अैसी रचना करनी चाहिये, जो अपने बल पर टिकी रहे, अपना तौल खुद कायम रख सके।

(अंग्रेजीसे)

मॉरिस फ्रिडमेन

आगामी हिन्दुस्तानी परीक्षाअें

हिन्दुस्तानी लिखावटसे काबिल तककी आगामी परीक्षाअें ता० २६-२७ दिसम्बर, १९५३ को होंगी। फीसके साथ आवेदन-पत्र वर्धा कार्यालय पहुंचानेकी आखिरी तारीख ३०-११-'५३ है।

अधिक जानकारीके लिअे नीचे दिये हुअे पते पर लिखें।

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा,
वर्धा

अमृतलाल नाणावटी०
परीक्षा-मंत्री

गांधी और साम्यवाद

[श्री विनोबाकी भूमिकाके साथ]

लेखक: **किशोरलाल मशरूवाला**

कीमत १-४-० डाकखर्च ०-५-०

नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद - ९

www.vinoba.in

योजना नीचेसे हो

भारतके संविधानका अेक आदेशात्मक सिद्धान्त यह है कि "राज्य स्वायत्त शासनकी अिकाअियोंके रूपमें ग्राम-पंचायतोंका संगठन करनेके लिअे कदम अुठायेगा।" गांधीजीने भी अिस बात पर बड़ा जोर दिया था कि ग्राम-पंचायतोंको पुनर्जीवित करके भारतमें आर्थिक और राजनीतिक सत्ताका विकेन्द्रीकरण होना चाहिये। सच्चे स्वराजके अुनके सपनेमें देशभरमें "स्वावलम्बी और स्वयंशासित ग्राम-प्रजातंत्रों" को जन्म देनेका विचार निहित था।

भारतमें बहुत प्राचीन समयसे ग्राम-समाज हमारे राष्ट्रीय जीवनके अभिन्न अंग रहे हैं। . . . मुख्यत: अंग्रेजी हुकूमतके जमानेमें शासनके और आर्थिक संगठनके जरूरतसे ज्यादा केन्द्रीकरणके कारण ये ग्राम-पंचायतें धीरे-धीरे खतम हो गअीं।

पश्चिमके सभी मुख्य राजनीतिक और सामाजिक विचारक अिस बातको महसूस करने लगे हैं कि अगर आधुनिक लोकशाहीको सामाजिक-आर्थिक संगठनके अेक अमली अुपायके रूपमें सफल होना हो, तो अुसका विकेन्द्रीकरण होना चाहिये। प्रो० जोडने कहा है: "अगर सामाजिक कार्यमें मनुष्यकी श्रद्धाको पुन: जाग्रत करना हो, तो राज्यको तोड़ना होगा और अुसके कामका बंटवारा करना होगा।" डॉ० बूडिन भी "छोटे-छोटे, सुगठित प्रजातंत्रोंको सभ्यताकी सच्ची नैतिक अिकाअियां" मानते हैं। आधुनिक समाजशास्त्र अिस सिद्धान्तको मानता है कि "मनुष्य अुस दशामें सबसे ज्यादा सुखी होता है, जब वह छोटे समाजोंमें रहता है।" आधुनिक राज्योंके दोषोंका विश्लेषण करते हुअे प्रो० अेडम्स चाहते हैं कि हम "सारी बुराअियोंके मूलमें जायें और सत्ताके विकेन्द्रीकरणकी साहसपूर्ण नीति अपनायें।" प्रसिद्ध अमेरिकन समाजशास्त्री ल्यूअिस मम्फोर्ड "खुले प्रदेशमें छोटे सन्तुलित समाज" निर्माण करनेकी सिफारिश करते हैं। आजके अमेरिकामें छोटे-छोटे समाज ग्राम्य जीवन और सहकारी प्रयत्नको पुनर्जीवित करनेमें अभी भी बड़ा महत्त्वपूर्ण भाग ले रहे हैं। 'केन्टुकी ऑन दि मार्च' (केन्टुकी की दौड़) अैसे पुरुषों और स्त्रियोंकी अेक रोमांचक कहानी है, जो अेक छोटे क्षेत्रमें सबकी भलाअीके लिअे साथ मिलकर काम करते ह। प्रो० रिचार्ड पेस्टन अपनी 'स्मॉल टाअुन रिनेंसान्स' नामक पुस्तकमें जोर देकर यह बात कहते हैं कि "शक्तिशाली छोटे समाजोंमें ही वह वातावरण सुलभ होता है, जिसमें लोकशाही फलती-फूलती है और सशक्त बनी रहती है।" डॉ० बोरसोडी न्यूयॉर्कके नजदीक अपनी स्कूल ऑफ लिविंग नामक संस्थामें विकेन्द्रित छोटे समाजका यही प्रयोग करते रहे हैं। अमेरिकाके ओहियो राज्यके यलोस्प्रिंग्स नामक स्थानमें डॉ० मॉरगेन समाज-जीवनके संगठनका जो प्रयत्न कर रहे हैं, वह लोकतंत्रात्मक जीवन-पद्धतिको स्थायी और सुरक्षित बनानेका वीरतापूर्ण प्रयास है।

अिस तरह ग्राम-पंचायतोंका विचार कोअी मध्यकालीन विचार नहीं है; न वह कबाअिली जीवनका अवशेष है। जैसा कि डॉ० राधाकृष्णन कहते हैं, "गांवोंमें वापिस जानेका मतलब प्राचीन कालकी ओर जाना नहीं है; भारतकी स्वाभाविक जीवन-पद्धतिको कायम रखनेका यही अेकमात्र रास्ता है।" डॉ० राधाकमल मुकर्जी अपनी पुस्तक 'डेमोक्रेसीज़ ऑफ दि अीस्ट' (पूर्वके लोकतंत्र) में बताते हैं कि ग्राम-समाज किस प्रकार "अैसे नये राज्यतंत्रका आधार प्रदान करेंगे, जो विविध स्थानीय और कार्यकारी दलोंको अेक सूत्रमें बांधकर भावी राज्योंके निर्माणमें आजके पार्लियामेंटरी नमूनेके केन्द्रीय तंत्रोंके बजाय ज्यादा सन्तोषजनक सिद्ध होगा।"

अिस तरह, शासन और आर्थिक संगठनकी बुनियादी अिकाअियोंके रूपमें ग्राम-पंचायतोंका यह नमूना पुराना और पिछड़ा हुआ होनेके बजाय आजके वैज्ञानिक प्रगतिके अिस युगकी भावनाके अनुकूल है। विज्ञानको अपनी सारी आधुनिक सिद्धियोंके साथ विकेन्द्रीकरणका समर्थन करना चाहिये, न कि केन्द्रीकरणका। यह सोचना भी गलत है कि ग्राम-पंचायतोंसे हममें अलगावकी भावना पैदा होगी। प्राचीन कालमें भी हमारे यहां राजनीतिक और आर्थिक प्रवृत्तियोंका सारे स्तरों पर सुन्दर समन्वय था। सच पूछा जाय तो विज्ञान और लोकशाहीकी प्रगतिको आजके जमानेमें आर्थिक और राजनीतिक सत्ताके विकेन्द्रीकरणको अनिवार्य रूपसे बढ़ाना चाहिये।

भारतमें ग्राम-पंचायतोंकी पुरानी परम्परायें आजकी दलगत लोकशाहीके बजाय सारी जनताके सहयोग पर आधार रखनेवाली यानी 'सर्वांगी' लोकशाहीकी दिशामें काम करती रही हैं। पंचोंकी आवाज हमेशा परमेश्वरकी आवाज मानी जाती थी। 'पंच परमेश्वर' अिन ग्राम-प्रजातंत्रोंका आदर्श था। पंचायतोंके चुनाव अधिकतर सर्वानुमतिसे होते थे; जब कभी सर्वानुमति प्राप्त करना संभव नहीं होता था, तब गांवके सबसे छोटे बच्चे द्वारा चिट्ठियां अुठवाकर चुनाव पूरे किये जाते थे। अगर हम लोकशाहीकी पक्की बुनियाद पर देशका नीचेसे पुनर्निर्माण करना चाहते हैं, तो हमें 'सर्वांगी' लोकशाहीकी परम्पराओंके आधार पर अपनी ग्राम-पंचायतोंको पुनर्जीवन देना होगा। कांग्रेस वर्किंग कमेटी द्वारा प्रदेश कांग्रेस कमेटियोंको दी गअी यह हिदायत अुचित ही है कि जहां तक संभव हो कांग्रेस पार्टीके आधार पर पंचायतोंका चुनाव लड़नेकी कोशिश न करे। प्रजा-समाजवादी पार्टीकी भी यही राय है। हम आशा करें कि देशकी दूसरी राजनीतिक पार्टियां भी अिस प्रश्न पर गहराअीसे विचार करेंगी और ग्राम-पंचायतोंको दलगत राजनीतिका अखाड़ा न बनानेका गंभीर निर्णय करेंगी। हमारी ग्राम-पंचायतकी पुरानी परम्पराओंको व्यापक, दलगत राजनीतिसे दूर, असाम्प्रदायिक तथा जाग्रत लोकशाहीके आदर्श पर पुनर्जीवित करनेके लिअे हम सबको सच्चे दिलसे सहयोग देना चाहिये। तभी हम राष्ट्रकी सच्ची प्रतिभाके अनुसार भारतका पुनर्निर्माण करनेकी आशा रख सकते हैं।*

(अंग्रेजीसे) **श्रीमन्नारायण अग्रवाल**

* अ० भा० कां० कमेटीके १ नवम्बर, १९५३ के 'अिकॉनामिक रिव्यू' से संक्षिप्त।

भूदान-यज्ञ

विनोबा भावे

कीमत १-४-० डाकखर्च ०-६-०

नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद-९

विषय-सूची

		पृष्ठ
सत्याग्रहकी लड़ाअी	गांधीजी	२९७
धर्मकार्य सबको करना चाहिये	विनोबा	२९८
विश्व-शांति और बाजारोंका सवाल	विल्फ्रेड वेलॉक	२९९
अेक बुनियादी सवाल	मगनभाअी देसाअी	३००
गांधीजी और धर्म-परिवर्तन	मगनभाअी देसाअी	३०१
औजार या बाजार?	मॉरिस फ्रिडमेन	३०२
योजना नीचेसे हो	श्रीमन्नारायण अग्रवाल	३०४
टिप्पणियां:		
भूल-सुधार	म० प्र०	२९९
साम्ययोगका तत्त्वज्ञान	विनोबा	३००
आगामी हिन्दुस्तानी परीक्षाअें	अमृतलाल नाणावटी	३०३

www.vinoba.in